Vol. 6, Issue. 1, (January 2017) pp. 28-35 Sangeet Galaxy
ISSN: 2319-9695

हिन्दी साहित्य के छायावादी कवियों का संगीत प्रेम

डॉ. अमित कुमार वर्मा
असिसटेन्ट प्रोफेसर, संगीत भवन
विश्व भारती, शन्तिनिकेतन, प0 बंगाल
E mail: kr.amitverma@gmail.com

संगीत और काव्य दोनों नादाधारित कलाएं है। संगीत स्वर प्रधान है, काव्य शब्द प्रधान। दोनों के मूल में नाद है। भाव दोनों का प्राण है। काव्य और संगीत दोनों एक दूसरे से इतनी गहराई से जुड़े है कि इनको अलग करना कला की आत्मा को नष्ट करने जैसा होगा। संगीत अर्थबोध के लिए काव्य का सहारा लेता है और काव्य प्रभाव वृद्धि के लिए संगीत का।[1] पं0 ओंकारनाथ ठाकुर के अनुसार– मेरी दृष्टि में ककरादि व्यंजनों के साथ अकरादि व्यंजनों का जो संबंध है, देह के साथ आत्मा का जो संबंध है, वही संगीत का कविता से संबंध है।[2] डॉ0 शरतचंद्र श्रीधर परांजपे कहते है – संगीत नाद प्रधान साहित्य है और साहित्य शब्द प्रधान संगीत है।[3] कार्लाइल के शब्दों में– संगीतमय विचार काव्य है। कवित्री महादेवी वर्मा काव्य को सार्थक शब्द समूह और संगीत को लयप्रधान ध्वनि समूह मानती है।[4] कह सकते है कि संगीतमय कविता और काव्यात्मक संगीत ही पूर्णरूप में कविता या संगीत कहे जाने के अधिकारी है।[5] जहाँ संगीत का मधुर नाद आनंदमग्न कर देता है वहीं काव्य की कोमलकान्त पदावली और मधुर भावों की योजना श्रोता को आनंदित कर देती है।

भक्तिकाल में रचा गया साहित्य अपनी काव्यमयता और संगीत सौन्दर्य के कारण ही जन–जन में लोकप्रिय हो पाया और जन–मन को लुभा पाया। कबीर, सूर, तुलसी, मीरा, बिहारी आदि कवियों से लेकर आधुनिक साहित्य व काव्य गढ़ने वाले कलमकारों की रचनाओं में भी संगीत की अभिव्यंजना मुखरित हुई मिलती है। कभी अपने मन की विरह वेदना की अभिव्यक्ति के लिए, कभी हृदय की तड़प और कसक को बयां करने के लिए, कभी मन की करूण अवस्था को जगजाहिर करने के लिए तो कभी सांगीतिक वातावरण सृजित करने के लिए कवियों ने संगीत और सांगीतिक शब्दावलियों का भरपूर प्रयोग अपने काव्य में किया है।

हिन्दी साहित्य के छायावादी कवियों के द्वारा रचित काव्य का प्रमुख आकर्षण भी उनकी संगीतमयता ही है। हिन्दी साहित्य का छायावादी काल 1918 से 1936 तक माना जाता है। छायावाद हिन्दी साहित्य की वह काव्य धारा है जिसमें प्रकृति का मानवीकरण हुआ है। लक्षणा व व्यंजना शब्दशक्ति के प्रयोग के साथ–साथ स्थूल पर सूक्ष्म को स्थापित किया गया है। हालांकि आरम्भ में छायावाद एक व्यंगात्मक संबोधन था, उस नई विचारधारा के लिए, जिसमें कल्पना तत्व का विशेष महत्व था। इसका एक विशेष कारण अंग्रेजों की गुलामी थी। जहाँ अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता नहीं थी। इसलिए छायावादी कवि, जो गुलाम भारत की युवा पीढ़ी का प्रतिनिधित्व कर रहे थे, ने भारतीय जनता को स्वतंत्रता के लिए ऊर्जान्वित करने के लिए व उनका आह्वाहन करने के लिए एक सांकेतिक शैली की खोज की, जिसपर पाश्चात्य रेनेसा शैली का भी प्रभाव था। परन्तु तत्कालीन हिन्दी के प्रमुख आलोचकों, यहाँ तक कि रामचंद्र शुक्ल की दृष्टि ने भी उनके इस महत्व को नहीं पहचाना और लगभग उसकी खिल्ली उड़ाते हुए छायावाद नाम दे दिया। यह नाम कालांतर में नई धारा के कवियों द्वारा पूरी तरह स्वीकार कर लिया गया। जयशंकर प्रसाद ने मोती की चमक और शब्दों की चमक की समानता बताते हुए यह सिद्ध किया कि कविता में संकेत और ध्वनि ही उसे उच्चस्तरीय कविता बनाती है अर्थात व्यंजना अथवा ध्वन्यात्मकता के कारण ही कविता में गहन से गहनतम् अर्थ व्याप्त रहता है जो छायावाद

के काव्य में पाया जाता है। इस तरह छायावाद शब्द सर्वमान्य हो गया उसे रामचंद्र शुक्ल ने विशिष्ट शैली का काव्य कहा। संक्षेप में कहें तो मानवीकरण, प्रतीकात्मकता, ध्वन्यात्मकता, बिम्बात्मकता, विशेषण विपरेय आदि छायावादी कविता की विशेषता के अंतर्गत आती है।

संगीत छायावादी कविता का सहजात गुण एवं अन्तरंग तत्व है। लय की थिरकन तो इसमें सर्वत्र द्रष्टव्य है। छायावादी काव्य की उत्कृष्टता, प्रभावशीलता एवं हृदयस्पर्शिता का मूलाधार संगीत ही है। इसमें संगीत का नैसर्गिक समावेश जहाँ पाठक को रसानुभूति कराता है, वहाँ अलौकिक आनंद की भी अनुभूति कराता है। इस धारा के काव्य में संगीत की अबाधित धारा निरन्तर प्रभावित हुई है। महादेवी ने मेरा पग–पग संगीत भरा जैसी पंक्तियों की रचना करके छायावादी काव्य में पग–पग पर संगीत का ही संकेत किया है। संगीत लहरी की मधुर गूँज छायावादी काव्य के लिए श्रृंगार ही नहीं वरन् उसके वैशिष्ट्य की भी द्योतक है। संगीत और छायावादी काव्य दोनों ही सूक्ष्म, रहस्यमय, एवं सुकुमार हैं। अतः समानधर्मा होने के कारण संगीत का छायावादी काव्य में अनुस्यूत हो जाना स्वाभाविक है।[6]

छायावादी कवि मनीषी संगीत की आत्मा से परिचित थे। उन्हें काव्य रस का ही बोध नहीं था, संगीततत्वों, वाद्ययन्त्रों, राग–रागनियों और नृत्यभेदों का भी ज्ञान था। उन्होंने रस के अनुरूप स्वर और राग, भावाभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त संगीतत्वों, राग–रागनियों एवं वाद्ययन्त्रों का प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने शैली के उस रूप को अपनाया, जिसमें संगीत स्वतः मुखरित हो जाता है।[7]

छायावादी कवियों के अन्तर्गत जयशंकर प्रसाद के काव्य में जहाँ आकार की लघुता, लालित्य, सरसता, माधुर्य, प्रवाह एवं लयात्मकता आदि संगीतोपयोगी विशेषताएं विद्यमान है, वहाँ भाषा और शैली भी संगीतानुकूल है। प्रसाद की रचनाओं– चित्राधार, काननकुसुम, झरना, आँसू, लहर और कामायनी आदि में संगीत तत्व प्रचुर मात्रा में प्राप्त होते है। वहीं हिन्दी कवि सुमित्रानंदन पंत कविता में भाव संगीत और भाषा संगीत के प्रस्फुटन को आवश्यक मानते है। इसलिए उनकी काव्य कृतियों में संगीत तत्वों का सहज समावेश हुआ मिलता है।

महादेवी के काव्य में शब्द संगीत और स्वर संगीत का बड़ा अनूठा मिश्रण है। उन्होनें स्वयं स्वर के साथ सार्थक शब्दावली की संगति पर बल दिया है। इनके काव्य में संगीत के वाद्ययंत्र, रागोल्लेख तथा नृत्य वर्णन द्वारा भी संगीत तत्वों की अभिव्यंजना हुई है। इसके साथ ही निराला की आत्मानुभूति को सहज अभिव्यक्ति देने में संगीत तत्वों ने बहुत अधिक सहयोग दिया है। निराला के काव्य में जहाँ नादाश्रित माधुर्य, रागात्मकता, कोमल व मधुर शब्दावली, राग–रागिनी की सम्यक योजना आदि संगीत तत्वों की अभिव्यक्ति में सहायक है, वहाँ गायन, वादन व नृत्य संबंधी उल्लेख संगीत तत्वों के अभिव्यंजक है। निराला के काव्य में भाव के अनुरूप लय तथा संगीत का प्रयोग किया गया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार निराला के काव्य में संगीत तत्वों की अतिशयता है, इसलिए उनका काव्य संगीत के अधिक निकट है। इनके अतिरिक्त अमृतलाल नागर, भगवतीचरण वर्मा, डॉ0 हरिवंशराय बच्चन, डॉ0 रामकुमार वर्मा आदि कलमकारों ने अपने काव्य क्षीर में संगीत मधु को बड़ी कुशलता से घोला है।

छायावादी कवियों ने अपनी रचनाओं में सांगीतिक शब्दावलियों, जैसे संगीत, नाद, स्वर, राग–रागिनी, लय, ताल, मीड़, तान आदि का भरपूर प्रयोग किया। जिससे उनके काव्य के सौन्दर्य में काफी वृद्धि हुई है, उसकी मर्मस्पर्शिता बढ़ी और साथ ही बढ़ी उसकी लोकप्रियता। छायावादी कवियों ने अपनी कलम से जो शब्द संगीत रचा उनके कुछ उदाहरण प्रस्तुत है–

संगीत

जब कलाकार स्वर तथा लय के माध्यम से अपने मन के भावों को अभिव्यक्त करता है तब संगीत कला का आविर्भाव होता है। संगीत सौन्दर्य का साकार एवं सजीव प्रदर्शन है तथा शब्द ब्रह्म की उपासना द्वारा स्वर ब्रह्म की प्राप्ति का साधन है।

जयशंकर प्रसाद के काव्य में शब्द संगीत का अवतारणा उल्लेखनीय है। स्वानुभूति की अभिव्यक्ति में वे लिखते है–

पिये हिय भरि रूप रस ये प्यासे आज
श्रुति सुधा संगीतमय हो शान्ति के सुख साज

महादेवी वर्मा का तो पग–पग ही संगीत भरा है, जिसके माध्यम से वो विराट संगीत को अभिव्यंजित करती है–

मेरा पग–पग संगीत भरा
श्वासों में स्वप्न पराग झरा

X X X X X X

गूंथ उनकी सांसो के गीत
कौन रचता विराट संगीत

निराला अपने व्याकुल मन की अभिव्यक्ति में संगीत शब्द का प्रयोग बड़े ही निराले ढंग से करते है–

आज बह गई, मेरी वह व्याकुल संगीत हिलोर
किस दिगन्त की ओर ?

पंत ने समस्त जगत् व जीवों में संगीत की मौन अभिव्यक्ति को अनुभूत करते हुए लिखा है–

संगीत एक ही व्याप्त मौन, तृण तरू जीवों के अंतर में
वस्तुएं सभी पाती निःस्वर, अभिव्यक्ति उसी अविदित स्वर में

नाद

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार, कविता नाद सौष्ठव के लिये संगीत का सहारा लेती है। नाद सौन्दर्य कविता की आयु बढ़ाता है और नाद सौन्दर्य का योग भी कविता का पूर्ण स्वरूप बड़ा करने के लिये आवश्यक होता है।

जयशंकर प्रसाद ने अपने काव्य में सरस्वती नदी के जल से मधुर नाद उत्पन्न होने की बात कही है और साथ ही अनाहत नाद का प्रयोग इहलोकेत्तर ध्वनि को दर्शाने की दृष्टि से भी किया है।

करती सरस्वती मधुर नाद,
बहती थी श्यामल घाटी में, निर्लिप्त भाव सी अप्रमाद

X X X X X

संहार सृजन से युगल पाद
गतिशील अनाहत हुआ नाद

सुमित्रानंदन पंत समस्त सृष्टि को ही नादमय मानते हुए कहते है–

नाद ही जीवन का उन्मेष।
नाद ही सृष्टि, नाद ही वेद।।

X X X X X

मेरी वीणा स्फटिक शंख
बन गई अगोचर,
झंकारे फूटती नाद बन उर के भीतर

महादेवी वर्मा के काव्य में नाद की अभिव्यंजना कुछ इस प्रकार मिलती है–

विश्ववीणा में अपनी आज।
मिला लो यह अस्फुट झंकार।।

स्वर

जो स्वयं ही दीप्तिमान अथवा सुशोभित हो वही स्वर है। जिसमें राग उत्पन्न करने की शक्ति हो वही स्वर है। श्रुतियों के अनन्तर पर उत्पन्न होने वाली गूंजदार व मधुर ध्वनि जो स्वतः रंजक भी हो, स्वर है। जब तक शब्द की सत्ता रहती है तब तक भौतिक आनंद और जब 'स्वर' की सत्ता प्रारंभ होती है, तब आध्यात्मिक आनंद की अनुभूति होती है।

प्रसाद ने अपने काव्य में कोयल के पंचम स्वर के माधुर्य का संकेत किया है। संगीत ग्रंथों में पंचम स्वर का अविर्भाव ही कोकिल ध्वनि से माना गया है।

हिली आम की डाल चला जो नवल हिंडोला
आह कौन है' पंचम स्वर से कोकिल बोला

x x x x x x

हो नयनों का कल्याण बना, आनन्द सुमन सा विक सा हो
वासन्ती के मन वैभव में, जिसका पंचम स्वर पिक सा हो

महादेवी ने स्वर शब्द का प्रयोग कोमल भावों को स्निग्धता व गाम्भीर्य प्रदान करने के लिए किया है–

आकर तब अज्ञात देश से जाने कितनी मृदु झंकार
गा जाती है करूण स्वर में, कितना पागल है संसार

x x x x x x

स्वर लहरी मैं मधुर स्वप्न की, तुम निद्रा के तार
जिसमें होता इस जीवन का, उपक्रम उपसंहार

पंत ने भावाभिव्यक्ति और अभिव्यंजना को मर्मस्पर्शी बनाने हेतु स्वर शब्द का प्रयोग किया है–

पत्रों के आनत अधरों पर सो गया निखिल वन का मर्मर,
ज्यों वीणा के तारों में स्वर।

x x x x x x

ले चुका जन्म था नव मानव, आते अश्रुत लोरी के स्वर,
पलने में उसको विश्व प्रकृति थी झुला रही गा–गा निःस्वर।

राग–रागिनी

स्वर और वर्ण से अलंकृत उस ध्वनि–विशेष को विद्वज्जन राग के नाम से संबोधित करते है, जो जनचित्त को रंग देती है, आनन्दित करती है। राग एक मनोभौतिकीय वस्तु है क्योंकि वह मन के आत्मगत अनुभवों का वस्तुपरक प्रकाशन है। यह सर्वप्रथम मन में सर्वांगपूर्ण निर्मित होता है और तब

बाहर भौतिक स्वर रूप में प्रक्षेपित किया जाता है। इसी कारण किसी राग रचना की प्रक्रिया में मन और भौतिक तत्व साथ–साथ कार्य करते है। 'राग' भारतीय शास्त्रीय संगीत का महत्वपूर्ण तथा प्रधान विषय है, जिसका सम्बन्ध सौन्दर्य से जुड़ा हुआ है। इसमें रंजकता, नाद सौन्दर्य तथा कलात्मक वातावरण निर्माण करने की अपूर्व क्षमता है।

महादेवी ने विहाग, दीपक, मल्हार आदि रागों का नामोल्लेख स्वानुभूति की अभिव्यक्ति आदि के लिए किया है–

पहली सी झंकार नहीं है
और नहीं वह मादक राग
अतिथि! किन्तु सुनते जाओं
टूटे तारों का करूण विहाग

x x x x x x

सब बुझे दीपक जला लूँ।
घिर रहा है तम आज दीपक रागिनी अपनी जला लूँ।

राग–रागिनी शब्दों का प्रयोग महादेवी के काव्य में प्रचुर मात्रा में मिलता है। रागिनी का मोह तो महादेवी में इतना अधिक है कि वह ''बीन भी हूँ, मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ'' कहकर स्वयं को रागिनी मान बैठती है।

छेड़कर जो वीणा के तार
शून्य में लय हो जाता राग

x x x x x

चित्रित तू मैं हूँ रेखा–क्रम
मधुर राग तू मैं स्वर संयम

x x x x x

मौन जग की रागिनी थी
व्यथित रज उन्मादिनी थी

सांगीतिक वातावरण की सृष्टि और भावाभिव्यक्ति के लिए निराला ने विभिन्न राग–रागनियों का उल्लेख अपने काव्य में किया है–

मलिन दृष्टि के भाषा–हीन भाव से
मर्मस्पर्शी देश–राग के–से प्रभाव से

x x x x x x

इमन–रागिनी की वह मधुर तरंग
मीठी थपकी मार करेगी मेरी निद्रा भंग

प्रसाद ने राग–रागिनी शब्दों का उल्लेख कहीं प्रतीक के रूप में और कहीं सांकेतिक अर्थ को अभिव्यक्त करने के लिए किया है–

इस करूणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती ?

पंत ने राग की महत्ता को अभिव्यंजित करते हुए कहा है–

जी करता कुछ नूतन गांऊ
प्राणों के वीणा तारों में
सोया आकुल राग जगांऊ

कवि भगवतीचरण वर्मा भैरव राग के माध्यम से जन–जागरण का संदेश देते है–

अभिमंत्रित करता है उसको, इन आहों का भैरव राग।
जल उठ! जल उठ! अरी धधक उठ महानाश सी मेरी आग।

मीड़

गायन या तंत्र वादन में एक स्वर से दूसरे स्वर तक आवाज को बिना खण्डित किये जाना मीड़ कहलाता है। युवती के यौवन को दर्शाने के लिए मीड़ का आश्रय ग्रहण करना निराला की अनूठी कल्पना है–

पैदा हुई है गरीब के घर पर
कोई जैसे जेवरों से सजता हो,
उभरते जोबन की मीड़ खाता हुआ
राग–साज पर जैसे बजता हो''

प्रसाद ने मीड़ शब्द का प्रयोग हृदय की तड़प और कसक की अभिव्यक्ति के लिए तथा काव्य में चमत्कार उत्पन्न करने के लिए प्रस्तुत किया है।

प्राणों के व्याकुल पुकार पर एक मीड़ ठहरा जाओ
प्रेम वेणु का स्वर लहरी में जीवन गीत सुना जाओ

डॉ0 रामकुमार वर्मा ने विरह वेदना की अभिव्यक्ति में तंत्री से निसृत मीड़ का उल्लेख बड़ी ही खूबसूरती से किया है–

मीड़ वेदना है उसमें, सुख स्वर्ग तड़पता बार–बार
जीवन तंत्री के तार–तार''

तान

राग गायन में विस्तार का महत्वपूर्ण अंग है– तान। इसका प्रयोग द्रुतगति में होता है। भारतीय संगीत में तान का वही स्थान है जो स्त्रियों के लिये आभूषण का। संगीत में तानों का प्रयोग चमत्कारवर्धक होता है, किन्तु यह चमत्कार गायक व वादक की सुरीलेंपन की सीमा तक ही उत्पन्न किया जाता है।

कविताओं में तान शब्द की योजना सांगीतिक वातावरण निर्माण के साथ–साथ विविध अनुभूतियों की अभिव्यक्ति में भी उपयुक्त है। प्रसाद ने तान शब्द को चमत्कारिक और विलक्षण ढंग से करूण और कोंमल भावों की अभिव्यक्ति में प्रयुक्त किया है–

चाँदनी धुली हुई है आज
बिछलते है तितली के पंख
सम्हलकर मिलकर बजते साज
मधुर उठती है तान असंख''

पंत ने अपने काव्य में तान शब्द का प्रयोग भावाभिव्यक्ति के साथ–साथ प्रभावशीलता एवं चमत्कार लाने के लिए किया–

छेड़ी होगी मस्त तान स्वर मिला मुखर मर्मर से
मधुर प्रतिध्वनि आयी होगी घाटी के भीतर से

महादेवी के काव्य में तान शब्द का प्रयोग भावाभिव्यंजक व चमत्कार उत्पन्न करने के लिए हुआ है–

धो स्वर प्रात में तिमिर गात
दुहराते अलि निशि मूक तान

निराला ने तान शब्द का प्रयोग सांगीतिक वातावरण सृजित करने के लिए बड़ी खूबसूरती के लिए किया है–

बह रही है सरस तान–तरंगिनी
बज रही वीणा तुम्हारी संगनी

वाद्ययंत्र

गायक को सहारा देने और उसके गीत का साथ करने, उसके मन को और अधिक लगाने, उसके दोषों को ढाँकने, गान–क्रिया को कालवृत्त में नापते रहने के लिये वाद्यों का आविष्कार हुआ। संगीत के मूल तत्वों की दृष्टि में वाद्यकला यथार्थतः संगीत की पूर्णरूपेण प्रतिनिधि कला है। इसमें न तो गान की भाँति काव्य अपेक्षित है और न नृत्य की भाँति अंग संचालन। वाद्यों की संगत द्वारा गायक की कला में सौन्दर्यात्मक एवं भावात्मक गुणों की वृद्धि होती है।

महादेवी ने मृदंग शब्द का प्रयोग करके नाद के साथ–2 लयादि संगीततत्वों की अभिव्यंजना भी की है–

घिरते नभ–निधि–आवर्त मेघ,
मसि–वातचक्र सी वात चली,
गर्जन मृदंग हर–हर मंजीर,
पर गाती दुःख बरसात भली

पंत के काव्य में वाद्ययंत्रों का उल्लेख संगीत तत्वों का पोषक है–

मचा खूब हुल्लड़ हुड़दंग, धमक धमाधम रहा मृदंग
X X X X X X
झाँझ, डफ, चंग, मुरज बज संग, हृदय में भरते मुक्त उमंग

निराला जी ने सारंगी, सितार जैसे वाद्यों को बड़ी ही सुन्दरता के साथ अपने काव्य में स्थान दिया है–

बातों जैसी मजती थी, वह सारंगी बजती थी
सुनकर राग, सरगम तान खिलती थी बहार की जान
X X X X X X
फिर सँवार सितार लो
बाँधकर फिर ठाट अपने, अंक पर झंकार दो

प्रसाद की कलम लिखती है –

ऊँचे चढ़े हुए वीणा के तार मधुप से गूंज रहे
परदा रखते है सुर पर वे मनमाने से बोल रहे

नृत्य

दार्शनिक की आत्मा उसके चिंतन में निवास करती है, कवि की आत्मा उसके हृदय में,गायक की कण्ठ में, किन्तु नृत्यांगना की आत्मा उसके अंग–प्रत्यंग में बसती है। संगीत को ही मूर्त रूप देने के लिये नृत्य का जन्म हुआ। मनुष्य जब अपने गहनतम् मनोभावों को शब्दों में व्यक्त करता है, तो उसे काव्य कहते है और शारीरिक चेष्टाओं द्वारा व्यक्त करता है, तो वह नृत्य कहलाता है या दूसरे शब्दों में नृत्य काव्य का शारीरिक रूप है। उल्लास के क्षणों को शारीरिक संवेग के साथ जीना ही नृत्य है। आनंदित चित्त से गीत फूटते है, अति आनंदित चित्त से नृत्य।
प्रसाद नृत्योल्लेख से सांगीतिक वातावरण की सृष्टि करते हुए कहते है–

शब्द, स्पर्श, रस, रूप गंध की
परदर्शिनी सुगढ़ पुतलियाँ,
चारों ओर नृत्य करती ज्यों
रूपवती रंगीन तितलियां

पंत के काव्य में नृत्य का वर्णन भी संगीत तत्वों की अभिव्यक्ति में सहायक रहा है–

लोक नृत्यों से ले पद न्यास, वेश, भूषा स्वर लय विन्यास
छात्र रचते मोहक सह नृत्य, रूढ़ मन में भर भाव हुलास।

निराला जी के काव्य में नृत्य की अभिव्यंजना देखिए–

नाचते ग्रह तारा मण्डल, पलक में उठ गिरते प्रतिपल
धरा घिर घूम रही चंचल, काल गुणत्रय–भय रहित समर।

संदर्भ–

1 प्रो0 विश्वनाथ प्रसाद, *कला एवं साहित्य–प्रवृत्ति और परम्परा,* पृ0–16
2 संगीत पत्रिका, हाथरस से प्रकाशित, मई 1951, *कविता और संगीत*
3 हरिश्चंद्र श्रीवास्तव (संपादक), *संगीत निबंध संग्रह ''साहित्य और संगीत''* पृ0–75
4 महादेवी वर्मा, *सन्धिनी,* चिंतन के क्षण पृ0–23
5 संगीत पत्रिका मई 1941, संगीत और काव्य, पृ0–302
6 कौशल नंदन गोस्वामी– *छायावादी काव्य में संगीत तत्व,* प्रकाश बुक डिपो, बरेली, पृ0 ix
7 वही, पृ0–x